भारतीय वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान पत्रिका
वर्ष 7 अंक (1) जून 1999 पृष्ठ 1-6

# औषधीय एवं सगंध पौधों के मृदा-जनित रोग और उनका जैविक नियंत्रण — एक समीक्षा

एच. बी. सिंह, ए. कालरा* एवं जयेन्द्र कुमार जौहरी
राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान (वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद्), लखनऊ 226 001

**सारांश** — गेंदा *(Tagetes minuta)*, क्वीन घास (*Artimisia annua*), मेंथा *(Mentha* spp.), जर्मन कैमोमाइल *(Matricaria chamomile)*, जिरेनियम *(Pelargonium graveolens)*, रोजमेरी *(Rosemarinus officinalis)*, पामारोजा *(Cymbopogon martinii, C. flexuosus)*, ब्रह्मी *(Cintella asiatica)* तथा सदाबहार *(Catharanthus roseus)*, इत्यादि औषधीय पौधे भारत में आर्थिक महत्व हेतु उगाये जाते हैं। यह सभी पौधे अनेक कवक रोगों से ग्रसित होते हैं। इन रोगों में मुख्य बीमारियां मेंथा का म्लानि रोग व कालर रॉट (*स्केलेरोशियम राल्फसाई* तथा *फ्यूजेरियम* स्पीशीज) क्वीन घास की स्केलेरोटीनियां रॉट *(स्केलेरोटीनिया स्केलेरोशियोरम)*, जिरेनियम का तना सड़न *(राइजोक्टोनिया सोलेनाई)* व गेंदे तथा पचौली की कॉलर राट *(स्केलेरोशियम राल्फसाई)* द्वारा, मृदाजनित हैं। ये बीमारियां मुख्यतः जड़ों या तनों या दोनों के जोड़ के स्थान पर सड़न के लक्षण दर्शाती हैं। मृदाजनित होने के कारण इनकी रासायनिक रोकथाम आर्थिक रूप से बहुत महंगी पड़ती है अतः दो मृदा-जनित कवक जो कि सहजीवी, परोपजीवी व शोषण अथवा लयन द्वारा इन रोगों का नियंत्रण करते हैं उनसे सम्बन्धित प्रयोगों का वर्णन किया गया है। इन दोनों फफूँदों, *ट्राइकोडर्मा हार्जियेनम* तथा *ग्लियोक्लेडियम वाइरेन्स*, द्वारा अपेक्षित परिणाम प्राप्त हुए तथा इनकी रोग नियंत्रण संबंधी कार्यशैली का विवरण इस लेख में प्रस्तुत है।

## प्रस्तावना

औषधीय एवं सौन्दर्यीकरण प्रयोजनों के लिए पादपों एवं पादप उत्पादों के सारतत्वों का प्रयोग करना उतना ही प्राचीन है, जितना कि मानव-इतिहास। पाषाण युग या आदिकाल से जब मनुष्य जंगलों में निवास करता था, सौन्दर्यीकरण एवं चिकित्सीय उपचार हेतु पौधों एवं पौध द्रव्यों का प्रयोग करता रहा है। मानव सभ्यता व मानसिक चेतना के विकास के साथ-साथ औषधीय एवं सगंध महत्व के पौधों के उपयोग का भी निजीकरण हुआ है। हमारे देश में औषधीय एवं सगंध पौधों का अद्भुत भंडार है। इन पर शोध एवं विकास प्रक्रिया भी पुरातन काल से चली आ रही है। परिणामस्वरूप, आज हम अपनी प्राथमिक आवश्यकताओं जैसे, औषधि, सुगंधित द्रव्य, मसाले, रंग-रोगन, आदि के लिए इन्हीं पौधों पर आश्रित हैं। भारत में योजनाबद्ध विकास के दौरान औद्योगिक वस्तुओं के मूल्यों में कृषि वस्तुओं के मूल्यों की तुलना में ज्यादा तेजी से वृद्धि हुई है। इसके कई बुरे परिणाम कृषि पर आश्रित जनसंख्या को भोगने पड़े हैं। 1950-51 में राष्ट्रीय आय में कृषि का हिस्सा लगभग 60 प्रतिशत था जो कि 1997 में घटकर मात्र 20 प्रतिशत रह गया है इनके कारणों का अवलोकन करने पर पता चलता है कि परंपरागत कृषि अब आर्थिक रूप से लाभकारी नहीं रही है, अतः इस समस्या के समाधान के लिए औषधीय एवं सगंध पौधों को कृषि प्रणाली में द्रुतगति से अपनाया जा रहा है क्योंकि इनसे आर्थिक लाभ के साथ-साथ, विदेशों में मांग के कारण निर्यात द्वारा विदेशी मुद्रा भी अर्जित की जा सकती है।

## प्रमुख औषधीय एवं सगंध पौधे और उनका महत्व : एक परिचय

### जंगली गेंदा

जंगली गेंदा या *टैजेटस मिनूटा* (*Tagetes minuta*), एस्टेरेसी कुल का पौधा है जिससे तेल प्राप्त किया जाता है। यह तेल सुगंध उद्योग, दवाई तथा कृषि उत्पादों पर आधारित उद्योगों में उपयोग किया जाता है। इसके पौधों का प्रयोग आमाशय की

*केन्द्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान, लखनऊ 226 015

विभिन्न बीमारियों के नियंत्रण में भी किया जाता है। इसकी खेती से प्रति हेक्टेयर 50000-54000 रूपये प्रति वर्ष का लाभ प्राप्त किया जा सकता है[6]।

### *आर्टीमिसिया एनुआ* (Artimisia annua)

यह पौधा मुख्यतः शीतोष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों में उगाया जाता है। इस पौधे के द्वारा आर्टीमिसिनिन नामक यौगिक पाया जाता है, जिसका उपयोग मलेरिया नियंत्रण में किया जाता है। इसकी खेती से प्रतिवर्ष प्रति हेक्टेयर 40000 रूपये का शुद्ध लाभ कमाया जा सकता है[7]। इसी वर्ष 'ई० माल' नामक औषधि बाजार में आयी है जिससे सेरीब्रल मलेरिया का उपचार किया जा रहा है।

### मेंथा

इसे मिन्ट या मेंथा (Mentha) प्रजाति कहते हैं। इसकी खेती प्रायः इसके सगंध तेल में पाये जाने वाले यौगिक मेंथाल (menthol) के लिए की जाती है जिसका उपयोग स्वादगंध उद्योग व विभिन्न प्रकार की औषधियों में किया जाता है। इसकी खेती से प्रतिवर्ष एक हेक्टेयर खेत से 72000-75000 रूपये का लाभ होता है[5]।

### जर्मन कैमोमिला

इसे वानस्पतिक भाषा में *मैट्रीकेरिया कैमोमिला (Matricaria chamomila)* कहते हैं, जिसका उपयोग औषधि व सुगन्धित तेल बनाने में होता है। कैमोमिला के फूल से निकलने वाला तेल जो व्यापार में "ब्लू आयल" के नाम से जाना जाता है, सुगंध, क्रीम तथा शैम्पू में प्रयोग होता है। इसके फूल तथा पौधे औषधि के रूप में विभिन्न पाचन तंत्र से सम्बन्धित बीमारियों आदि में प्रयोग किये जाते हैं। इसके सूखे फूलों में 0.3-0.5 प्रतिशत तक तेल होता है, जिसका बाजार भाव रूपये 30,000 प्रति किलोग्राम है। इसकी खेती से 1.10 लाख रूपये प्रति हैक्टेयर की शुद्ध बचत होती है[8]।

### जिरेनियम

इसे *पेलारगोनियम ग्रेवियोलेंस (Pelargonium graveolens)* कहते हैं। व्यापारिक तौर पर जिरेनियम का तेल वाष्पन प्रक्रिया द्वारा पत्तियों एवं मुलायम टहनियों से निकाला जाता है। इसके सगंध तेल का उपयोग साबुन, सुगंध तथा श्रृंगार-सामग्री बनाने में होता है। इसकी खेती से प्रतिवर्ष 25,000-30,000 रूपये प्रति हैक्टेयर का शुद्ध लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

### रोजमैरी

इसे वानस्पतिक भाषा में *रोजमैरीनस आफिसिनेलिस (Rosemarinus officinalis)* कहते हैं, जिसके पत्तियों को बहुतायत से प्रयोग किया जाता है। इसकी खेती से प्रति हैक्टेयर 40,000-50,000 रूपये का शुद्ध लाभ प्रति वर्ष प्राप्त किया जा सकता है।

### रोशा घास

इसे पामारोजा या *सिम्बोपोगॉन मार्टिनाई (Cymbopogon martinii)* भी कहते हैं, जिसका सगंध तेल प्राकृतिक जिरैनियॉल और जिरैनिल एसीटेट का अच्छा स्रोत है, जिनका प्रयोग प्रसाधन सामग्री बनाने तथा स्वादगंध उद्योगों में होता है। आजकल तेल का बाजार भाव 400-450 रूपये प्रति किलोग्राम है तथा एक हैक्टेयर खेत से एक वर्ष में 20,000 से 25,000 रूपये तक का लाभ कमाया जा सकता है[1]।

### नींबू घास

इसे वानस्पतिक भाषा में *सिम्बोपोगॉन फ्लेक्सुओसस (Cymbopogan flexuosus)* कहते हैं इसकी पत्तियों के आसवन से जो तेल प्राप्त होता है उसका मुख्य घटक सिट्रॉल (80-90 प्रतिशत) होता है। इसका प्रयोग विटामिन एवं सगंध रसायन बनाने में किया जाता है। तेल का बाजार भाव लगभग 250 रूपये प्रति किलोग्राम है और प्रतिवर्ष प्रति हैक्टेयर 12,000-15,000 रूपये की आमदनी इसकी खेती द्वारा की जा सकती है।

इसके अतिरिक्त विभिन्न औषधीय एवं सगंध पौधे जैसे - मस्क दाना, सदाबहार (पेरीविन्कल), सर्पगंधा, कैनडुला, बैकोपा, पचौली, लवेन्डर, *एन्डोग्रैफिस पेनीकुलाटा, कोलियस*, प्रजाति, *सेन्टेला एशियाटिका (Centella asiatica), कुरकुमा लान्गा*, आदि प्रमुख हैं। परन्तु सगंध एवं औषधीय पौधों के शस्य एवं विपणन प्रक्रिया में मुख्य बाधा व्याधियाँ या रोग हैं जो कि मुख्यतः विभिन्न प्रकार के प्राथमिक कारकों जैसे कवक, जीवाणु, विषाणु व सूत्रकृमि आदि द्वारा जनित होते हैं, मृदा से जुड़े कवकों द्वारा होने वाले रोग आर्थिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

### प्रमुख मृदोढ़ रोग एवं उनके रोगकारक

गहन सर्वेक्षण एवं अध्ययन के बाद औषधीय एवं सगंध पौधों में होने वाली कई नवीन मृदोढ़ बीमारियों एवं उनके रोगकारकों का पता लगाया गया है, जिनमें मेंथा प्रजाति के म्लानि (Blight) रोग एवं कालर राट (Collar rot) जो कि *स्कलेरोशियम राल्फसाई (Sclerotium rolfsii)* व *फ्यूजेरियम (Fusarium)* प्रजाति द्वारा[9,11,12] *आर्टीमिसिया एन्नुआ* का स्केलेरोटिनीया राट जो कि *स्केलेरोटिनिया स्कलेरोशियम (Sclerotinia sclerotiorum)*

द्वारा, जंगली गेंदा व पचौली का कालर राट जो कि *स्क्लेरोशियम राल्फसाई*[13,15,17] द्वारा होते हैं, प्रमुख हैं। अनुसंधान द्वारा यह पाया गया कि ये रोगकारक कवक पौध वृद्धि की किसी भी अवस्था में पौधों पर आक्रमण करके उसे पूरी तरह नष्ट कर देते हैं। साथ ही यह भी देखा गया है कि एक रोग में एक से अधिक कवक भी संलग्न होते हैं, जो कि रोग हानि को बढ़ाते हैं। म्लानि या उकठा रोग के लक्षण पौधे में मुरझान के रूप में स्पष्ट होता है, बाद में पौधा पीला पड़कर पूरी तरह से सूख जाता है। शोध द्वारा यह स्पष्ट किया गया कि म्लानि रोग (Collar rot), जड़ नेक्रोसिस व जल प्रवाह तंत्र के अवरुद्ध होने के कारण होता है, जबकि कालर राट रोग में पौधे के तने का कालर भाग सड़ने लगता है, जिस कारण पौधा नष्ट हो जाता है। अत्यधिक मृदा नमी तथा भूमि में अधिक कार्बनिक पदार्थ होने पर कालर राट का प्रकोप अत्यधिक देखा गया है।

## रोग नियंत्रक

औषधीय एवं सगंध पौधों के आर्थिक महत्व को देखते हुए, इनमें होने वाले रोगों को रोकने के लिए तीव्र गति से शोध कार्य किया जा रहा है। रोग नियंत्रण के लिए मुख्यतः हम रोगरोधक प्रजातियों एवं रसायनों का ही प्रयोग करते आ रहे हैं, परन्तु औषधीय व सगंध पौधों की रोग प्रतिरोधक प्रजातियों की अनुपलब्धता तथा रसायनों के कुप्रभाव के अतिरिक्त निम्न कारणों से भी इनका उपयोग प्रभावित हुआ है :

(i) महँगापन

(ii) पर्यावरण प्रदूषण

(iii) रोगकारकों में रसायनों के प्रति उत्पन्न प्रतिरोधक क्षमता

(iv) स्वास्थ्य के लिए उत्पन्न खतरे

(v) मृदा प्रदूषण, तथा

(vi) लाभदायक जीवों की जीवन क्षति

उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखकर वैज्ञानिकों द्वारा रोग नियंत्रण की नवीन तथा पर्यावरण हितैषी (eco-friendly) विधि का विकास किया गया है, जिसे जैविक नियंत्रण कहते हैं।

## जैविक नियंत्रण : एक परिचय

मृदा में जैविक युद्ध निरन्तर चलता रहता है। बहुत प्रकार के सूक्ष्म जीव और पौधे नष्ट होते रहते हैं और सक्षम सूक्ष्म जीवी पौधे जीवित रह जाते हैं। अस्तित्व के लिए यह संघर्ष प्रत्येक जीव करता है और सूक्ष्म जीव का अस्तित्व बना रहता है, यह प्राकृतिक नियम है। यही नियम जैविक नियंत्रण का मूलभूत आधार है।

अतः यह एक रोग विरोधक सूक्ष्म जीवी द्वारा, दूसरे रोगकारक सूक्ष्म जीवी का नियंत्रण है। जैविक नियंत्रण में प्रयुक्त रोग निरोधक सूक्ष्मजीव को एन्टागोनिस्ट कहते हैं। इन रोगरोधियों की जैविक निरोधिता (एन्टागोनिज्म) तीन प्रकार की होती है :- प्रतिजैविकता (antagonism), प्रतियोगिता (competition) तथा शोषण व लयन (disintegration/Lysis)।

## औषधीय एवं सगंध पौध रोगों के परिप्रेक्ष्य में जैविक रोग निरोधकों की खोज

उपलब्ध शोध साहित्य के अनुसार विभिन्न फसली पौधों के रोग-रोधन के लिए जैविक रोग निरोधकों (biocontrol agents) का प्रयोग विगत एक दशक से सफलतापूर्वक किया जा रहा है, लेकिन औषधीय एवं सगंध पौधों के रोगों के नियंत्रण के लिए जैविक रोग निरोधकों के प्रयोग की जानकारी सीमित है। औषधीय एवं सगंध पौधों के आर्थिक महत्व को देखते हुए विगत पांच वर्षों के सघन शोध के पश्चात् मृदा से दो रोग निरोधक कवक खोजे गये हैं, जिन्हें क्रमशः *ट्राइकोडर्मा हरजीएनम* तथा *ग्लियोक्लेडियम वाइरेन्स* कहते हैं। ये दोनों कवक सबडिविजन *ड्यूटेरोमाइकोटिना* के सदस्य हैं, जिनकी लैंगिक अवस्था (sexual stage) *हाइपोक्रिया जिलेटीनोसा* है।

जैविक रोग निरोधक कवक *ट्राइकोडर्मा हरजीएनम* व *ग्लियोक्लेडियम वाइरेन्स* सभी कारक कवकों जैसे *स्क्लेरोशियम राल्फसाई, फ्यूजेरियम, राइजोक्टोनिया सोलेनाई, स्केलेरोटिनिया स्क्लेरोशियोरम,* आदि सभी कवकों को प्रतियोगिता (competetion), प्रति जैविकता (antogonism) तथा कवक पराजीविता (mycoparasitism) द्वारा परास्त करके पूर्णतया लयित (lysis) कर मार देते हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि रोगकारक कवक प्रतिकूल स्थितियों के समय विभिन्न प्रकार की संरचना जैसे *स्क्लेरोशिया (Sclerotia), क्लेमाइडोस्पर (Chlamydospore),* आदि बनाकर जीवित रहते हैं, अतः यह देखा गया है कि जैविक रोग निरोधक कवक न केवल रोगकारकों के कवक जाल को नष्ट करता है, बल्कि यह विभिन्न संरचनाओं जैसे स्केलेरोशिया, आदि को भी नष्ट कर देता है।

## प्रायोगिक उपयोग

### 1. जैविक रोग निरोधक कवकों के साथ संवर्धन माध्यम में निवेशित *राइजोक्टोनिया सोलेनाई* का जैविक परीक्षण

यह प्रयोग प्रयोगशाला में कृत्रिम माध्यम में किया गया, जिसमें एक ही काँच की प्लेट में आलू, डेक्सट्रोज अगार माध्यम (potato dextrose agar) डालकर इसके सूखने पर एक साथ ही प्लेट के एक तरफ *राइजोक्टोनिया सोलेनाई (Rhizoctonia solani)* व दूसरी तरफ रोगनिरोधक फफूँद को निवेशित कर दिया जाता

है। निवेशित प्लेट को 10 दिन तक बी. ओ. डी. इनक्युवेटर में निर्धारित तापमान पर रखने के बाद अवलोकन करने पर पाया गया कि *ट्राइकोडर्मा हरजीएनम* आइसोलेट-2 तथा *ग्लियोक्लेडियम वाइरेन्स* आइसोलेट-1 रोगकारक कवक को पूरी तरह से मार देते हैं और इनमें अवरोधन क्षेत्र भी नहीं पहचाना जा सका जबकि अन्य रोग निरोधक की प्रजातियां भी प्रभावी रूप से रोगकारक की वृद्धि एवं विकास को अवरुद्ध करती है (सारणी 1)।

### 2. जैविक रोग निरोधक व *स्क्लेरोशिया* का जैविकता परीक्षण

यह प्रयोग मृदा में किया गया। इसमें *स्क्लेरोटिनिया स्क्लेरोशियोरम* के स्क्लेरोशिया को *ट्राइकोडर्मा हरजीएनम* व *ग्लियोक्लेडियम वाइरेन्स* के साथ रखा गया तथा विभिन्न समयांतराल पर प्रेक्षण लिया गया, जिसका परिणाम सारणी 2 में दर्शाया गया है। प्रयोग में यह पाया गया कि *ग्लियोक्लेडियम वाइरेन्स* के निवेशन के 5 दिन बाद *स्क्लेरोशिया* का अंकुरण 100 प्रतिशत था लेकिन 10 दिन व 15 दिन बाद, यह 92 प्रतिशत व 5 प्रतिशत रह गया, जबकि 20 दिन या इसके बाद प्रेक्षण पर देखा गया कि स्क्लेरोशिया की अंकुरण क्षमता पूरी तरह से खत्म हो चुकी थी तथा कोई भी स्क्लेरोशिया अंकुरित नहीं हो पायी।

इसी प्रकार *ट्राइकोडर्मा हरजीएनम* के निवेशन के 5 व 10 दिन बाद 100 से 97 प्रतिशत तक अंकुरण देखा गया जबकि 15 व 20 दिन बाद यह घटकर 12 व 13 प्रतिशत तथा 25 दिन बाद यह शून्य हो गया। इस प्रकार यह निष्कर्ष निकलता है कि दोनों रोग निरोधक, रोगकारक कवकों की प्रसुप्त संरचनाओं

सारणी 1 — जैविक रोग निरोधक कवकों के साथ संवर्धन माध्यम में निवेशित *राइजोक्टोनिया सोलेनाई (Rhizoctonia solani)* का जैविक परीक्षण

| जैविक रोग निरोधक | *राइजेक्टोनिया सोलेनाई* का जैविक स्पर्धा सूचकांक | व्यवहार(10 दिन बाद) अवरोधन क्षेत्र (मिलीमीटर) |
|---|---|---|
| *ट्राइकोडर्मा हरजीएनम* (आइसोलेट टी. एच.-1) | ++ | 10 |
| *टी. हरजीएनम* (टी. एच-2) | +++ | नहीं पाया जाता |
| *टी. हरजीएनम* (टी. एच-3) | ++ | 10 |
| *टी. हरजीएनम* (टी. एच-4) | ++ | 5 |
| *टी. हरजीएनम* (टी. एच-5) | ++ | 30 |
| *टी. विरडी* (टी. वी-1) | ++ | 30 |
| *टी. विरडी* (टी. वी-2) | ++ | 15 |
| *टी. कोनिनघाई* | + | 30 |
| *ग्लियोक्लेडियम वाइरेन्स* (जी. वी.- 1) | +++ | नहीं पाया जाता |
| *जी. वाइरेन्स* (जी. वी.-2) | ++ | 15 |

\+ *राइजोक्टोनिया सोलेनाई* की मध्यम वृद्धि

++ *राइजोक्टोनिया सोलेनाई* की क्षीण वृद्धि

+++ राइजोक्टोनिया की कवक जाल कालोनी लयित (complete lysis) कोई वृद्धि नहीं पाई गई

सारणी 2 — जैविक रोग निरोधक व *स्क्लेरोशिया* का जैविकता परीक्षण

| *टी. हरजीएनम* व *जी. वाइरेन्स* का स्क्लेरोशिया के साथ सम्पर्क समय (दिनों में) | स्क्लेरोशिया का जैविकता या *टी. हरजीएनम* | प्रत्युत्पत्ति प्रतिशत *जी. वाइरेन्स* |
|---|---|---|
| 5 | 100 | 100 |
| 10 | 97 | 92 |
| 15 | 12 | 5 |
| 20 | 3 | 0 |
| 25 | 0 | 0 |
| 30 | 0 | 0 |

सारणी 3 — जैविक रोग निरोधक कवकों द्वारा मेन्थाल मिन्ट के स्टोलन सड़न रोग का नियंत्रण

| उपचार | सकर संक्रमण, % | रोग नियंत्रण, % |
|---|---|---|
| सकर + *टी. हरजीएनम* ($10^5$ बीजाणु / mL) | 42 | 58 |
| सकर + *जी. वाइरेन्स* ($10^5$ बीजाणु / mL) | 20 | 80 |
| *टी. हरजीएनम* उत्पाद से मृदा उपचार (10 g/kg मृदा) | 41 | 59 |
| *जी. वाइरेन्स* उत्पाद से मृदा उपचार (10 g/kg मृदा) | 13 | 87 |
| नियंत्रण (केवल *एस. स्क्लेशियारोम* से संक्रामित मृदा) | 100 | 0 |

को भी नष्ट करते हैं एवं इस प्रयोग में *ग्लियोक्लेडियम वाइरेन्स* अत्यधिक प्रभावी पाया गया।

### 3. जैविक रोग निरोधकों द्वारा मेन्थाल मिन्ट के स्टोलन सड़न रोग का नियंत्रण

मेन्थाल मिन्ट की खेती में प्रमुख समस्या स्टोलन सड़न की है, जिसका नियंत्रण प्रायोगिक व व्यावसायिक तौर पर जैविक रोग निरोधकों *ट्राइकोडर्मा हरजीएनम* व *ग्लियोक्लेडियम वाइरेन्स* द्वारा किया गया है। ट्राइकोडर्मा के 105 बीजाणु / mL की दर से बीजोपचार करने पर 58 प्रतिशत रोग नियंत्रण पाया गया जबकि मृदा उपचार 10 ग्राम प्रति किलो मिट्टी की दर से करने पर 56 प्रतिशत रोग नियंत्रण पाया गया।

इसी प्रकार *ग्लियोक्लेडियम वाइरेन्स* के 105 बीजाणु / mL बीजोपचार द्वारा 80 प्रतिशत तथा मृदा उपचार 10 ग्राम प्रति किलोग्राम मृदा पर 87 प्रतिशत रोग नियंत्रण पाया गया (सारणी 3)[16]।

### जैविक रोग निरोधकों का व्यावसायिक उत्पादन व प्रयोगविधि

प्रायोगिक उपयोग के लिए किण्वन तकनीक द्वारा जैविक रोग निरोधक कवकों का उत्पादन किया जाता है।। इसके उत्पादन के लिए ज्वार के दाने, फसलों के चारे, मोलेसेस या गेहूँ का चोकर आदि माध्यम के रूप में प्रयोग किया जाता है। पूर्ण रूप से फफूँद द्वारा किण्वित माध्यम को सुखाकर, पीसकर पाउडर का रूप दे दिया जाता है। इस पाउडर का 4 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार या 10 ग्राम प्रति किलोग्राम मृदा की दर से मृदा उपचार किया जाता है। वृहत् पैमाने पर मृदा उपचार आर्थिक दृष्टि से लाभकारी नहीं है। लेकिन बीजोपचार आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद तथा रोग नियंत्रण दोनों में उपयुक्त साबित हुआ है।

### जैविक रोग निरोधकों से अतिरिक्त लाभ

जैविक रोग निरोधक कवक, रोग नियंत्रित करने के साथ-साथ जैविक खाद का भी कार्य करते हैं। प्रयोगों द्वारा यह पाया गया कि *ट्राइकोडर्मा हरजीएनस* यू. पी. रोग रोकने के साथ-साथ पौध वृद्धि को भी बढ़ाने में सहायक है[3]। मेंथा में टी. एच. यू. पी. के कारण शाक वृद्धि तथा आवश्यक तेल की मात्रा में भी वृद्धि दर्ज की गई है[2]। इसी प्रकार एक अन्य शोध में *आर्टीमिसिया पेलेन्स* में भी टी. एच. यू. पी. के कारण पौध वृद्धि देखी गई है[4]। पौध वृद्धि के कारणों का पता लगाने के लिए शोध कार्य जारी है।

### समन्वित रोग नियंत्रण

जैविक नियंत्रण को अत्यधिक प्रभावी बनाने के लिए इसके साथ एक या एक से अधिक रोग नियंत्रण विधियों का एकीकरण समन्वित रोग नियंत्रण कहलाता है। इस पर शोध कार्य द्वारा यह निष्कर्ष पाया गया कि *हिप्टिस सुआविओलेन्स* के आवश्यक तेल को यदि *ट्राइकोडर्मा हरजीएनम* के साथ एकीकृत करके उपयोग किया जाये तो पर्यावरण संरक्षण के साथ-साथ रोग नियंत्रण भी प्रभावी होता है[14]। इसका प्रयोग *ब्रेसिका काउलोरापा* के विल्ट तथा राट रोग को रोकने में सफलतापूर्वक किया जा चुका है। इसके बीजोपचार से 43 प्रतिशत तथा मृदा उपचार से 72 प्रतिशत रोग नियंत्रण पाया गया (सारणी 4)। इसी प्रकार नीम तेल तथा *ट्राइकोडर्मा हरजीएनम* को समन्वित कर प्रभावी रोग नियंत्रण रिपोर्ट किया गया है[10]।

### भावी संभावनायें

औषधीय एवं सगंध पौधों के आर्थिक महत्व को दृष्टिगत करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि इनके रोगों का नियंत्रण पादप रोग वैज्ञानिकों का प्रथम एवं महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व है। साथ ही पर्यावरण को प्रदूषण मुक्त भी रखना है, इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए जैविक नियंत्रण ही एक मात्र विकल्प है। इस नियंत्रण विधि को वृहद पैमाने पर कृषकों तक पहुँचाने के लिए जैविक रोग निरोधकों का व्यावसायिक उत्पादन आवश्यक है जिसकी कार्य रूप रेखा वैज्ञानिकों द्वारा बनाई जा चुकी है और शीघ्र ही कृषकों को उपलब्ध करायी जा सकेगी।

सारणी 4 — *हिप्टिस सुआवियोलेन्स* व *ट्राइकोडर्मा हरजीएनम* द्वारा नोल खोल के विल्ट व कालर रोग का नियंत्रण[14]

| उपचार | सीडलिंग मोर्टेलेटी, % | रोग नियंत्रण, % |
|---|---|---|
| कन्ट्रोल (*एस. स्क्लेरोशियम*) युक्त मृदा | 92 (73.59)* | 0.0 |
| बीज + *ट्राइकोडर्मा हरजीएनम* बीजाणु ($10^5$ बीजाणु / mL) | 62 (51.94) | 32 (34.34) |
| बीज + हिप्टिस तेल | 64 (53.13) | 34 (25.66) |
| बीज + *टी. हरजीएनम* + हिप्टिस तेल | 52 (46.14) | 43 (40.91) |
| टी. हरजीएनम (10 mg/kg बीजाणु द्वारा मृदा उपचार) | 30 (33.20) | 67 (54.95) |
| *टी. हरजीएनम* + हिप्टिस तेल द्वारा मृदा उपचार (10 mg/kg + 0.5%) | 25 (29.99) | 72 (58.05) |

| | |
|---|---|
| एल. एस. डी. (सीडलिंग मोर्टेलिटी) | 0.01 = 2.358 |
| | 0.05 = 1.682 |
| एल. एस. डी. (रोग नियंत्रण) | 0.01 = 2.725 |
| | 0.05 = 1.916 |

*एन्गुलर रूपान्तरण (तीन रेप्लीकेशन)

## संदर्भ


1. हुसैन ए., *इसेन्शियल आयल प्लान्टस एण्ड देयर कल्टीवेशन*, सीमैप, लखनऊ, भारत (1994).
2. कालरा ए एवं सिंह एच वी, *सिम्पोजियम ऑन प्लान्ट साइन्स रिसर्च: प्रजेन्ट स्टेटस एण्ड फ्यूचर चैलेन्जेज, अप्रैल 2-3, 1996, हिसार, पृ. 33-134.*
3. कालरा ए, सिंह एच वी एवं सिंह एच पी, *प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय माइक्रोबियल इक्सप्लॉयटेशन कान्फ्रेन्स,* बी. एच. यू., वाराणसी, मार्च 1996 पृ 23.
4. कालरा ए, परमेश्वरन टी एन; रवीन्द्र एन एस व सिंह एच वी, *वार्षिक सम्मेलन ऑफ एस एम पी पी,* बी० आर० एम० विश्वविद्यालय, औरंगाबाद, 11-13 जनवरी, 1997.
5. कुमार सुशील, कहोल ए पी, पात्रा डी डी, राम एम, सिंह एस व त्यागी बी आर, *सीमैप लखनऊ फार्म बुलेटिन न०* 004 (1997) पृ 28.
6. कुमार सुशील, राम पी, राम एम, पात्रा एन के, सिंह एच बी, गर्ग एस एन, द्विवेदी एस व कुमार वी, *सीमैप लखनऊ फार्म बुलेटिन नं०* 007 (1997).
7. राम एम, जैन डी सी व कुमार सुशील, *सीमैप लखनऊ फार्म बुलेटिन नं०* 003 (1997) पृ 9.
8. राम एम, गुप्ता एम एम व कुमार सुशील, *सीमैप लखनऊ फार्म बुलेटिन नं०* 002 (1997) पृ 8.
9. सिंह आनन्द, *मैनेजमेन्ट ऑफ कालर रॉट डिजीज ऑफ मेन्था स्पीसीज विद स्पेशल इम्फैसिस ऑन बायलाजिकल कन्ट्रोल,* एम एस सी थीसिस, गोविन्दवल्लभ पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पन्तनगर (1996) पृ 102.
10. सिंह एच वी, *विश्व नीम कान्फ्रेंस,* फरवरी 24- 28, 1993, बैंगलोर (भारत) पृ 36.
11. सिंह एच वी, *सेमिनार ऑन पाइपेरिटा आयल इन 21st सेन्चुरी,* फरवरी 10, 1996, बरेली (भारत) पृ 24-26.
12. सिंह एच वी व कालरा ए, 83वीं भारतीय विज्ञान कांग्रेस, पटियाला (भारत) 3-8 जनवरी,1996.
13. सिंह एच वी व कालरा ए, *इन्डियन जरनल ऑफ माइकोलाजी एण्ड प्लांट पैथोलोजी,* **26** (1996) 120.
14. सिंह एच वी एवं हैडिक ए के, *जरनल ऑफ इसेन्शियल आयल रिसर्च,* **9** (1997) 683-687.
15. सिंह एच वी, कालरा ए, पात्रा एन के व कुमार सुशील, *49वाँ भारतीय फाइटोपैथोलॉजीकल वार्षिक सम्मेलन,* आर डी विश्वविद्यालय, जवलपुर, 15-17 फरवरी,1997.
16. सिंह एच वी, कालरा ए, पात्रा एन के व कुमार सुशील, *अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेंस ऑन प्लांट डिजीज मैनेजमंट फॉर ससटेनेबल एग्रीकल्चर,* आई. ए. आर. आई., नई दिल्ली, 10-15 नवम्बर, 1997.
17. सिंह एच वी, कालरा ए, पात्रा एन के व कुमार सुशील, 85वाँ भारतीय विज्ञान कांग्रेस हैदराबाद (भारत) 3-8 जनवरी, 1998.